The Chitransh Academic & Research
International Journal of Multidisaciplinary Reseaech
An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume1 | Issue 3 |June 2025
ISSN: 3049-303X (Online)
Website: www.thechitranshacadmic.in

बिहार में महिला नेतृत्व और सविनय अवज्ञा आंदोलन (1929–1933): एक उपेक्षित इतिहास

डॉ. वीरेंद्र कुमार [1]

शोधनिर्देशक, सहायक प्राध्यापक, एम.वी. कॉलेज, बक्सर

प्रीति भारती [2]

शोध छात्रा, इतिहास विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Received: ***01.06.25***

*Accepted:****09.06.25***

Published: ***30/06/25***

Keywords: *महिला नेतृत्व, सविनय अवज्ञा, बिहार आंदोलन, उपेक्षित इतिहास, नारीवादी दृष्टिकोण।*

ABSTRACT

यह शोध-पत्र बिहार में 1929 से 1933 के बीच हुए सविनय अवज्ञा आंदोलन में बिहार की महिलाओं की सक्रिय भूमिका का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। पारंपरिक इतिहासलेखन में महिलाओं को प्रायः सहायक भूमिका तक सीमित किया गया है, जबकि इस शोध में यह प्रतिपादित किया गया है कि बिहार की महिलाएं न केवल आंदोलन का हिस्सा थीं, बल्कि उन्होंने नेतृत्व, संगठन, जनजागरण और प्रतिरोध की स्पष्ट राजनीतिक भूमिका भी निभाई। ग्लू बेके, फौजिया बेगम, उमा देवी जैसी महिला नेताओं ने जेल यात्राएं कीं, विदेशी कपड़ों का बहिष्कार किया और सामाजिक पितृसत्ता के विरुद्ध आवाज़ उठाई। इस अध्ययन में सबऑल्टर्न दृष्टिकोण, नारीवादी इतिहासलेखन और इंटरसेक्शनलिटी के सिद्धांतों को आधार बनाकर यह बताया गया है कि कैसे दलित, मुस्लिम और ग्रामीण महिलाओं ने भी इस आंदोलन में महत्त्वपूर्ण भागीदारी की। शोध में प्रयुक्त प्राथमिक स्रोत जैसे पटना अभिलेखागार की फाइलें, पुलिस रिपोर्टें, और समाचार पत्र इस ऐतिहासिक यथार्थ को प्रामाणिकता प्रदान करते हैं। यह शोध बिहार के इस उपेक्षित अध्याय को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के व्यापक विमर्श में पुनर्स्थापित करता है और यह सिद्ध करता है कि महिलाएं केवल अनुयायी नहीं, बल्कि परिवर्तन की अग्रणी शक्तियाँ थीं।

1. भूमिका

भारत का स्वतंत्रता संग्राम न केवल एक राजनीतिक क्रांति थी, बल्कि यह सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक पुनरुत्थान और जनचेतना का साझा प्रयास भी था। इस संघर्ष में जहां अनेक महान पुरुषों की भूमिका को इतिहास में स्थान मिला, वहीं महिलाओं की भागीदारी को प्रायः सीमित, द्वितीयक या सहायक रूप में प्रस्तुत किया गया। यह प्रवृत्ति केवल राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं, बल्कि प्रादेशिक संदर्भों में भी दिखाई देती है। विशेष रूप से बिहार जैसे राज्य में, जहाँ स्वतंत्रता आंदोलन ने जन-जन को प्रभावित किया, वहाँ की महिलाओं के योगदान को इतिहासकारों द्वारा पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया।

इस उपेक्षा का प्रमुख कारण यह रहा कि पारंपरिक इतिहास-लेखन ने प्रायः पुरुष नेतृत्व, संगठनात्मक ढांचे और राजनीतिक घोषणाओं पर ध्यान केंद्रित किया, जबकि सामाजिक स्तर पर हुए योगदान, विशेषकर स्त्रियों के त्याग, नेतृत्व और जनसंघर्ष की अभिव्यक्तियों को गौण मान लिया गया। जबकि वास्तव में, बिहार की अनेक महिलाएं इस आंदोलन में केवल भागीदार ही नहीं थीं, बल्कि उन्होंने सार्वजनिक नेतृत्व, आर्थिक बहिष्कार, जेल यात्रा और सामाजिक सुधार जैसे महत्वपूर्ण कार्यों में अग्रणी भूमिका निभाई।

यह शोध-पत्र इसी ऐतिहासिक विस्मृति की पुनरावृत्ति करता है, जिसका उद्देश्य 1929 से 1933 के मध्य सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान बिहार की महिलाओं की भूमिका का गंभीर विश्लेषण प्रस्तुत करना है। इसमें यह स्पष्ट किया जाएगा कि महिलाओं की भागीदारी किसी प्रेरणा या समर्थन तक सीमित नहीं थी, बल्कि उन्होंने औपनिवेशिक सत्ता और सामाजिक पितृसत्ता दोनों के विरुद्ध एक संगठित और चेतन संघर्ष किया। यह विश्लेषण विद्वानों जैसे गेराल्डिन फोर्ब्स (1996), उमा चक्रवर्ती (2003) और सेखर बंद्योपाध्याय (2014) के विचारों पर आधारित रहेगा, जो नारीवादी और उपेक्षित वर्गों के इतिहास को केंद्र में लाने का प्रयास करते हैं।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

2. वैचारिक रूपरेखा एवं कार्यप्रणाली

2.1 वैचारिक दृष्टिकोण

बिहार के स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की भूमिका को विश्लेषित करने के लिए आवश्यक है कि उसे केवल एक ऐतिहासिक घटनाक्रम के रूप में न देखकर, एक सैद्धांतिक ढांचे में समझा जाए। इस अध्ययन में मुख्य रूप से तीन वैचारिक दृष्टिकोणों को अपनाया गया है, जो महिला सहभागिता को व्यापक सामाजिक संदर्भों में रखकर विश्लेषित करते हैं।

प्रथम, उपेक्षित वर्ग अध्ययन अथवा सबऑल्टर्न अध्ययन की परंपरा महिलाओं की स्थिति को उस ऐतिहासिक मौन के रूप में देखती है, जिसे औपचारिक इतिहास में स्थान नहीं मिला। इस दृष्टिकोण में यह स्वीकार किया गया है कि महिलाएं एक साथ दोहरे उत्पीड़न की शिकार रही हैं—पहला उनका लिंग और दूसरा उनका सामाजिक वर्ग या जातिगत पहचान (Chakravarti 2003; Spivak in Chakravarti)। बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक व्यवस्था में जातीय भेदभाव और आर्थिक विषमता गहराई से जुड़ी हुई थीं, वहाँ महिलाओं की स्थिति और भी अधिक जटिल थी। अतः इस दृष्टिकोण से उनका प्रतिरोध और भागीदारी केवल राजनीतिक नहीं, सामाजिक मुक्ति का प्रयास भी था।

द्वितीय, नारीवादी इतिहासलेखन की परंपरा, जिसे गेराल्डिन फोर्ब्स तथा भारती रे जैसे विद्वानों ने समृद्ध किया है, महिलाओं की सहभागिता को एक सजग, सचेतन और राजनीतिक हस्तक्षेप के रूप में देखती है (Forbes 1996; Ray 2002)। यह दृष्टिकोण महिलाओं को इतिहास की 'सहभागी' नहीं बल्कि 'निर्माता' के रूप में प्रस्तुत करता है। इस प्रकार की व्याख्या उनके नेतृत्व, रणनीति, और साहसिकता को रेखांकित करती है जो पुरुष-प्रधान राष्ट्रवादी विमर्श में अकसर अनदेखी रह जाती है।

तृतीय, इस शोध में बहुआयामी पहचानों के अंतर्संबंध अर्थात् अंतर्संलयनात्मकता (इंटरसेक्शनैलिटी) की धारणा को भी आधार बनाया गया है। इसमें महिलाओं की पहचान को केवल 'स्त्री' के रूप में सीमित न रखकर, उनके जातिगत, धार्मिक और क्षेत्रीय आयामों के साथ जोड़ा गया है (Omvedt 1993; Chakravarti 2003)। बिहार की दलित, मुस्लिम तथा ग्रामीण महिलाएं अपने विशिष्ट सामाजिक संदर्भों के कारण जिन प्रकार की बाधाओं और संघर्षों का सामना कर रही थीं, वे शहरी, उच्चवर्गीय और शिक्षित

महिलाओं से भिन्न थीं। अतः इस शोध में यह दृष्टिकोण आवश्यक था जिससे एक समग्र और न्यायसंगत समझ विकसित की जा सके।

इन तीनों दृष्टिकोणों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि बिहार की महिलाएं केवल राष्ट्रीय आंदोलन की संवाहक ही नहीं थीं, बल्कि सामाजिक बदलाव की वाहक भी थीं। उनके संघर्षों को केवल राष्ट्रीय स्वतंत्रता तक सीमित करना उनके बहुस्तरीय योगदान को सीमित कर देना होगा।

2.2 कार्यप्रणाली

इस शोध-पत्र की पद्धति ऐतिहासिक विश्लेषण और सामग्री अनुसंधान पर आधारित है, जिसमें प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतों का समावेश किया गया है। इसका उद्देश्य केवल घटनाओं का वर्णन नहीं, बल्कि उनकी सामाजिक, राजनीतिक और वैचारिक व्याख्या प्रस्तुत करना है।

प्राथमिक स्रोतों के अंतर्गत मुख्य रूप से पटना राज्य अभिलेखागार से प्राप्त गृह विभाग (Home Department) की फाइलें (1930–1933), आंदोलन के समय की प्रथम सूचना रिपोर्टें (एफ.आई.आर.), तथा उस समय के प्रमुख समाचार पत्र जैसे Searchlight (अंग्रेज़ी दैनिक) और Desh (हिंदी साप्ताहिक) का उपयोग किया गया है। इन स्रोतों में आंदोलनों के घटनाक्रम, महिलाओं की गिरफ्तारी, प्रशासन की प्रतिक्रिया और जनसमर्थन के प्रमाण उपलब्ध हुए हैं।

द्वितीयक स्रोतों में आधुनिक भारत के इतिहास पर लिखे गए प्रतिष्ठित इतिहासकारों के ग्रंथ जैसे बिपिन चंद्र (1989), सुमित सरकार (1983), गेराल्डिन फोर्ब्स (1996), उमा चक्रवर्ती (2003) एवं गेल ओमवेट (1993) द्वारा प्रस्तुत नारीवादी व सामाजिक विश्लेषण सम्मिलित हैं। इन ग्रंथों से वैचारिक ढांचा तैयार करने और ऐतिहासिक घटनाओं को गहराई से समझने में सहायता मिली है।

सूचनाओं के विश्लेषण हेतु सामग्री विश्लेषण (content analysis) और विमर्श विश्लेषण (discourse analysis) की पद्धति अपनाई गई है। इसके साथ ही क्षेत्रीय घटनाओं के तुलनात्मक अनुशीलन के माध्यम से यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार विभिन्न सामाजिक वर्गों की महिलाओं की भूमिका और अनुभव अलग-अलग रहे। यह पद्धति न केवल ऐतिहासिक तथ्यों को उजागर करती है, बल्कि उनके निहितार्थों की भी व्याख्या करने में सक्षम है।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

इस प्रकार, यह कार्यप्रणाली एक ऐसे शोध की नींव रखती है, जो स्त्री इतिहास को उसके वास्तविक सामाजिक संदर्भों में स्थापित करने की दिशा में प्रयासरत है।

3. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारत का स्वतंत्रता संग्राम केवल राजनीतिक स्वराज प्राप्ति की प्रक्रिया नहीं था, बल्कि यह सामाजिक पुनर्गठन, सांस्कृतिक चेतना और लैंगिक न्याय की दिशा में भी एक आंदोलन था। इस संघर्ष के विभिन्न चरणों में सन 1929 से 1933 तक की अवधि विशेष महत्त्व रखती है, क्योंकि इसी काल में पूर्ण स्वराज का उद्घोष हुआ, और कांग्रेस के नेतृत्व में सविनय अवज्ञा आंदोलन ने जनमानस में प्रतिरोध की चिंगारी प्रज्वलित की।

लाहौर अधिवेशन (1929) में जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने ब्रिटिश शासन के अधीन "डोमिनियन स्टेटस" को अस्वीकार करते हुए पूर्ण स्वराज का प्रस्ताव पारित किया, तब देशभर में एक सशक्त जनांदोलन की पृष्ठभूमि तैयार हुई। महात्मा गांधी द्वारा प्रारंभ किए गए सविनय अवज्ञा आंदोलन ने जनता को एक सुसंगठित, अहिंसक मार्ग प्रदान किया, जिससे वे औपनिवेशिक शोषण का विरोध कर सकें। बिहार में इस आंदोलन का प्रभाव अत्यंत व्यापक रहा। पटना, गया, मुजफ्फरपुर, भागलपुर, दरभंगा जैसे प्रमुख नगरों से लेकर सुदूर गांवों तक आंदोलन की लहर फैल चुकी थी।

बिहार की जनता ने विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार, नमक कानून तोड़ने, शराब की दुकानों पर धरना देने जैसे कार्यक्रमों में बढ़-चढ़कर भाग लिया। पुरुष कार्यकर्ताओं के साथ-साथ महिलाओं ने भी इन आंदोलनों में सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने घरों से बाहर निकलकर सार्वजनिक सभाओं का आयोजन किया, प्रभात फेरियों में भाग लिया और विदेशी वस्तुओं की होली जलाने जैसे कार्य किए। यह भागीदारी सामाजिक दृष्टि से क्रांतिकारी थी, क्योंकि उस समय महिलाओं का सार्वजनिक जीवन में आना असाधारण माना जाता था।

इस कालखंड में महिलाओं की भूमिका केवल सहायता तक सीमित नहीं रही, उन्होंने नेतृत्व भी संभाला और राज्य सत्ता के दमन का साहसपूर्वक सामना किया। वे गिरफ्तार हुईं, जेल गईं, और फिर भी आंदोलन से विचलित नहीं हुईं। यह न केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध उनकी चेतना का प्रमाण था, बल्कि भारतीय समाज की पारंपरिक पितृसत्तात्मक संरचना के विरुद्ध एक मौन विद्रोह भी था।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

अतः 1929 से 1933 तक का समय बिहार के लिए केवल राजनीतिक दृष्टि से नहीं, बल्कि सामाजिक बदलाव और लैंगिक सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा। इस पृष्ठभूमि की गहराई से समझ ही हमें इस शोध की वैचारिक दिशा को सही रूप से स्थापित करने में सहायता प्रदान करेगी।

4. महिलाएं आंदोलन में: नेतृत्व, सहभागिता और प्रतिरोध

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में जब सविनय अवज्ञा आंदोलन का प्रवाह जन-जन तक पहुँचा, तब उसमें महिलाओं की भागीदारी केवल प्रतीकात्मक नहीं, बल्कि निर्णायक और नेतृत्वकारी थी। बिहार जैसे राज्य में, जहाँ सामाजिक रूप से स्त्रियों की सार्वजनिक उपस्थिति सीमित थी, वहाँ उनका सड़क पर उतरना, सभा करना, बहिष्कार अभियान चलाना और दमनकारी औपनिवेशिक शासन का सामना करना एक ऐतिहासिक परिवर्तन का संकेत था।

4.1 प्रमुख महिला नेता

बिहार में स्वतंत्रता संग्राम के दौरान कई ऐसी महिलाएं उभरीं, जिन्होंने न केवल आंदोलन का नेतृत्व किया, बल्कि अपने साहस और दूरदर्शिता से अनेक पुरुष नेताओं को भी प्रेरित किया। पटना, गया, और अन्य जिलों में श्रीमती ग्लू बेके, फौजिया बेगम, उमा देवी, और महाश्वेता देवी जैसी महिलाओं ने आंदोलन की अग्रिम पंक्ति में खड़े होकर कार्य किया (Searchlight 1930; Nair 1996)। इन्होंने विदेशी कपड़ों की होली जलाने, शराब की दुकानों पर धरना देने तथा सत्याग्रह में भाग लेने जैसे कार्यक्रमों का संचालन किया (Ray 2002; Forbes 1996)। इन कार्यों के लिए उन्हें न केवल सामाजिक आलोचना झेलनी पड़ी, बल्कि औपनिवेशिक शासन द्वारा गिरफ्तारी और कारावास जैसी सज़ाओं का भी सामना करना पड़ा।

इन महिलाओं की कार्यप्रणाली केवल प्रतिरोधात्मक नहीं थी, वह रचनात्मक भी थी। वे आंदोलन की योजना बनाने, महिलाओं को संगठित करने और जन-जागरण अभियान चलाने में भी संलग्न रहीं। इन नेताओं की उपस्थिति ने यह प्रमाणित किया कि महिला नेतृत्व केवल अपवाद नहीं, बल्कि एक सशक्त ऐतिहासिक परिघटना थी।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

4.2 शहरी और ग्रामीण सहभागिता

बिहार में आंदोलन की प्रकृति क्षेत्रीय विभाजन के आधार पर भिन्न रही। शहरी क्षेत्रों में, जहाँ महिलाएं अपेक्षाकृत अधिक शिक्षित और संगठित थीं, उन्होंने आंदोलन में विचारशील नेतृत्व प्रदान किया। उन्होंने जनसभाओं का आयोजन किया, प्रभात फेरियों में भाग लिया, और स्वदेशी वस्त्रों के प्रचार हेतु प्रचार अभियानों का संचालन किया (Omvedt 1993; Chakravarti 2003)। इन महिलाओं के पास सामाजिक संसाधन और वैचारिक पहुँच थी, जिससे वे नारी चेतना को नए स्वरूप में व्यक्त कर सकीं।

दूसरी ओर, ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएं, जिन्हें शिक्षा और संसाधनों की अधिक सुविधा नहीं थी, उन्होंने अपने साहस और सामूहिक चेतना के बल पर आंदोलन को गहराई प्रदान की। गया, मुज़फ्फरपुर, और पटना जैसे जिलों में ऐसी अनेक महिलाएं थीं, जिन्होंने न केवल धरने और जुलूसों में भाग लिया, बल्कि गिरफ्तार होकर जेल भी गईं (Home Department Files 1931; Searchlight 1931)। उनके लिए यह संघर्ष केवल राजनीतिक स्वतंत्रता का नहीं था, बल्कि सामाजिक न्याय और आत्मसम्मान की भी लड़ाई थी।

ग्रामीण महिलाएं, जो प्रायः खेतों, घरेलू कार्यों और सामाजिक सीमाओं से बंधी रहती थीं, जब वे सड़कों पर उतरीं, तो उन्होंने सामाजिक संरचना को भी झकझोर दिया। उनका यह सहभाग न केवल आंदोलन को विस्तार देता है, बल्कि यह दर्शाता है कि स्वतंत्रता संघर्ष एक बहुवर्गीय, बहुस्तरीय जनांदोलन था।

4.3 प्रतिरोध के रूप

बिहार की महिलाओं का प्रतिरोध अनेक रूपों में प्रकट हुआ। सबसे प्रमुख था विदेशी वस्त्रों का सार्वजनिक बहिष्कार। उन्होंने न केवल स्वयं विदेशी कपड़े पहनने से इंकार किया, बल्कि अन्य महिलाओं को भी इसके लिए प्रेरित किया। कई स्थानों पर महिलाओं ने विदेशी कपड़ों की होली जलाकर अपने प्रतिरोध को प्रतीकात्मक और सार्वजनिक रूप दिया (Forbes 1996; Bandyopadhyay 2014)। इसी प्रकार, शराब की दुकानों के सामने धरने देकर उन्होंने नशाखोरी और सामाजिक पतन के विरुद्ध भी स्वर उठाया।

इसके अतिरिक्त, प्रभात फेरियों, लोकगीतों और नारों के माध्यम से महिलाओं ने जन-जागरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने गाँव-गाँव जाकर स्वतंत्रता के संदेश को फैलाया। गीतों और नारों में उन्होंने न केवल राष्ट्रभक्ति प्रकट की, बल्कि औपनिवेशिक सत्ता के दमनकारी चरित्र को भी चुनौती दी। उनके यह

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

सांस्कृतिक उपकरण न केवल भावनात्मक प्रेरणा देते थे, बल्कि सामाजिक एकता को भी सशक्त करते थे।

इस प्रकार, महिलाओं के प्रतिरोध की अभिव्यक्ति केवल राजनीतिक थी, ऐसा कहना अधूरा होगा। उनका संघर्ष सामाजिक कुरीतियों, पितृसत्ता और औपनिवेशिक नियंत्रण के विरुद्ध एक समग्र विद्रोह था, जिसने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को एक व्यापक और समावेशी स्वरूप प्रदान किया।

5. सरकारी दमन एवं लिंग आधारित उत्पीड़न

स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी को औपनिवेशिक सरकार ने एक चुनौती के रूप में देखा। जहाँ पुरुषों के आंदोलन को राजनीतिक विद्रोह के रूप में लिया गया, वहीं महिलाओं की भागीदारी को सामाजिक मर्यादा के विरुद्ध समझा गया। इस कारण उनका दमन दोहरे स्तर पर हुआ—एक ओर कानूनी दमन, और दूसरी ओर लिंग आधारित भेदभाव एवं सामाजिक उत्पीड़न।

ब्रिटिश शासन द्वारा महिलाओं पर भारतीय दंड संहिता की धारा 144, 151 और 301 के अंतर्गत अनेक मुकदमे दर्ज किए गए (Police Reports 1930–1933; Nair 1996)। धारा 144 के अंतर्गत महिलाओं की सार्वजनिक सभा और जुलूसों को अवैध घोषित कर दिया गया। धारा 151 में उन्हें 'शांति भंग की आशंका' के आधार पर बिना वारंट गिरफ़्तार किया गया। वहीं, धारा 301 का प्रयोग महिलाओं के भाषणों या नारेबाज़ी को हिंसा भड़काने वाला मानकर किया गया। यह स्पष्ट है कि इन धाराओं का प्रयोग विशेष रूप से भय उत्पन्न करने और महिलाओं को सार्वजनिक जीवन से पीछे हटाने के उद्देश्य से किया गया।

गिरफ्तारी के पश्चात जेलों में महिलाओं को जिस प्रकार की परिस्थितियों का सामना करना पड़ा, वह मात्र शारीरिक नहीं बल्कि मानसिक और सामाजिक यातना का भी रूप था। महिलाओं के लिए जेलों में बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, पोषण की कमी और अमानवीय व्यवहार सामान्य बात थी (Nair 1996)। कई महिलाओं को पुरुष कर्मचारियों की निगरानी में रखा गया, जो उनके लिए असुरक्षित वातावरण उत्पन्न करता था। गर्भवती महिलाओं, वृद्धाओं और किशोरियों के लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं की गई थी। यह सब अंग्रेजी शासन की उस नीति को दर्शाता है जो महिला आंदोलकारियों को अपराधियों के रूप में चित्रित कर समाज में उनके प्रति संदेह उत्पन्न करना चाहती थी।

उमा चक्रवर्ती (2003) के अनुसार, यह उत्पीड़न केवल राज्य द्वारा नहीं, बल्कि सामाजिक ताने-बाने द्वारा

भी संचालित था। जेल से लौटने के बाद अनेक महिलाओं को समाज में तिरस्कार की दृष्टि से देखा गया। उन्हें 'चरित्रहीन', 'मर्यादा तोड़ने वाली' और 'अनुचित रूप से सक्रिय' बताया गया। यह सामाजिक कलंक स्त्रियों के मनोबल को तोड़ने का औजार बन गया।

फिर भी, इन दमनात्मक प्रयासों के बावजूद, महिलाओं की प्रतिबद्धता में कोई कमी नहीं आई। उनकी हिम्मत, आत्मबल और देश के प्रति समर्पण ने यह सिद्ध किया कि आंदोलन में उनकी भागीदारी केवल भावनात्मक नहीं, बल्कि वैचारिक और क्रांतिकारी भी थी।

6. तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य

बिहार में सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान महिलाओं की भूमिका को बेहतर समझने के लिए इसकी तुलना अन्य प्रांतीय आंदोलनों से करना आवश्यक है। यह तुलनात्मक दृष्टिकोण न केवल बिहार के आंदोलन की विशिष्टताओं को उजागर करता है, बल्कि यह भी स्पष्ट करता है कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम एक समान रूप से संचालित आंदोलन नहीं था, बल्कि विभिन्न क्षेत्रों की सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनाओं के अनुरूप उसमें विविधताएँ थीं।

बंगाल में महिलाओं की भागीदारी मुख्यतः शहरी, शिक्षित और मध्यम वर्ग की महिलाओं द्वारा संचालित थी, जिनके पास सामाजिक पूंजी, संगठनात्मक संरचना, और वैचारिक पहुंच थी (Ray 2002; Forbes 1996)। वे विश्वविद्यालयों, महिला समितियों और साप्ताहिक पत्रिकाओं के माध्यम से आंदोलन में सक्रिय थीं। बंगाल की महिलाएं बड़ी संख्या में साहित्य, पत्रकारिता और सार्वजनिक वक्तृत्व के माध्यम से आंदोलन की विचारधारा को सशक्त कर रही थीं।

इसके विपरीत, बिहार में महिलाओं की भागीदारी अपेक्षाकृत ग्रामीण पृष्ठभूमि की थी, जिसमें दलित, मुस्लिम और निम्नवर्गीय स्त्रियों की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय रही। इन महिलाओं ने न केवल भागीदारी की, बल्कि प्रत्यक्ष विरोध, सत्याग्रह, जेल-यात्रा, और सामाजिक बहिष्कार जैसे जोखिमों का सामना भी साहसपूर्वक किया। बिहार की महिलाएं साक्षरता या संगठित मंचों के अभाव में भी लोकगीतों, धार्मिक आयोजनों और सामाजिक परंपराओं के माध्यम से आंदोलन में एक जीवंत ऊर्जा का संचार कर रही थीं।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

इसी प्रकार, यदि महाराष्ट्र और दक्षिण भारत की बात करें, तो वहाँ के आंदोलनों में अपेक्षाकृत आधुनिक शिक्षा प्राप्त, ब्राह्मण या उच्च जातीय महिलाओं की भागीदारी अधिक रही (Omvedt 1993; Bandyopadhyay 2014)। इन क्षेत्रों में आंदोलन अधिक संगठित, वैचारिक और नेतृत्व-केंद्रित रहा, जबकि बिहार में यह आंदोलन जनसामान्य आधारित, सहभागिता-केंद्रित और प्राकृतिक प्रतिरोधात्मक प्रवृत्तियों पर आधारित था।

इस तुलना से स्पष्ट होता है कि बिहार की महिलाएं केवल 'समर्थक' की भूमिका में नहीं थीं, बल्कि उन्होंने अपने सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों में आंदोलन की दिशा और स्वरूप को प्रभावित किया। बिहार की महिलाओं ने परंपरा को चुनौती देते हुए राजनीतिक सक्रियता का जो स्वरूप गढ़ा, वह भारतीय स्वाधीनता आंदोलन की व्यापकता और विविधता का प्रमाण है।

7. सामाजिक एवं राजनीतिक प्रभाव

सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान बिहार में महिलाओं की भागीदारी केवल तत्कालिक राजनीतिक विरोध तक सीमित नहीं रही, बल्कि इसने दीर्घकालिक सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तन की दिशा भी सुनिश्चित की। जब बिहार की स्त्रियाँ सड़कों पर उतरीं, तो उन्होंने न केवल ब्रिटिश शासन को चुनौती दी, बल्कि परंपरागत सामाजिक संरचनाओं को भी झकझोर दिया।

इन आंदोलनों का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रभाव महिलाओं की सामाजिक मान्यता में वृद्धि के रूप में देखा गया। वे स्त्रियाँ, जिन्हें पहले केवल घरेलू दायरे तक सीमित माना जाता था, अब सार्वजनिक जीवन में भाग लेने लगीं। सत्याग्रह, जुलूस, कारावास और जनजागरण में भागीदारी ने उन्हें समाज में एक नई पहचान दी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात, अनेक महिलाओं ने इस अनुभव को आगे बढ़ाते हुए पंचायती राज, नगरपालिका, तथा स्थानीय राजनीतिक संस्थाओं में भागीदारी की (Forbes 1996; Chakravarti 2003)। उनके इस सक्रिय नागरिक रूप ने लोकतांत्रिक भारत के गठन में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

इस महिला सक्रियता का एक और ऐतिहासिक प्रभाव यह रहा कि इन आंदोलनों ने 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन की आधारभूमि तैयार की। बिहार में महिलाओं द्वारा 1930–1933 के मध्य दिखाई गई एकजुटता, संगठन क्षमता और त्याग-भावना ने जनता के बीच यह विश्वास स्थापित किया कि महिलाएं अब केवल

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

अनुयायी नहीं, बल्कि नेतृत्वकर्ता भी बन सकती हैं (Chandra et al. 1989; Sarkar 1983)। यही कारण है कि 1942 के आंदोलन में बिहार की महिलाओं की भागीदारी और भी व्यापक और संगठित रही।

इसके अतिरिक्त, इन घटनाओं ने भावी पीढ़ियों की स्त्रियों को प्रेरित किया। सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान जो सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना विकसित हुई, उसने महिला अधिकारों, शिक्षा, तथा आत्मनिर्भरता के आंदोलन को भी बल प्रदान किया। यह स्पष्ट है कि इस समयकाल की महिला भागीदारी ने न केवल राजनीतिक बदलाव लाया, बल्कि भारतीय समाज की मूलभूत धारणाओं में भी गहरा हस्तक्षेप किया।

8. इतिहासलेखन की समीक्षा

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में महिलाओं की भूमिका को लेकर जो लेखन अब तक प्रचलित रहा है, वह प्रायः उन्हें एक 'सहायक शक्ति' के रूप में चित्रित करता है। प्रख्यात इतिहासकार बिपिन चंद्र और सुमित सरकार (Chandra et al. 1989; Sarkar 1983) जैसे विद्वानों ने भले ही राष्ट्रीय आंदोलन के विविध पक्षों को विस्तार से प्रस्तुत किया हो, परंतु महिला सहभागिता को अक्सर सीमित और पार्श्वभूमि में रखा गया। यह प्रवृत्ति पुरुष-केंद्रित इतिहासलेखन की उस परंपरा को दर्शाती है जिसमें नेतृत्व, नीति निर्माण और निर्णायक घटनाओं को केवल पुरुषों के माध्यम से देखा जाता है।

ऐसे इतिहास-लेखन में स्त्रियाँ मुख्यतः भावनात्मक प्रेरक, घरेलू त्याग की प्रतीक, या फिर जनता के समर्थन के उपकरण के रूप में प्रस्तुत होती हैं। उनकी सक्रिय राजनीतिक भूमिका, रणनीतिक सोच और नेतृत्व क्षमता को या तो नजरअंदाज किया गया है या गौण स्थान दिया गया है। परिणामस्वरूप, स्त्री की स्वतंत्र राजनैतिक पहचान ऐतिहासिक आख्यानों में विलीन हो जाती है।

हालाँकि, नारीवादी इतिहासलेखन और सबऑल्टर्न अध्ययनों ने इस प्रवृत्ति को चुनौती दी है। गेराल्डिन फोर्ब्स (1996), उमा चक्रवर्ती (2003) तथा जनकी नायर (1996) जैसे इतिहासकारों ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि महिलाओं की भागीदारी को एक 'सक्रिय राजनीतिक इकाई' के रूप में देखा जाना चाहिए। इन विद्वानों के अनुसार, स्त्रियाँ केवल उपस्थिति तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि उन्होंने औपनिवेशिक सत्ता और सामाजिक पितृसत्ता दोनों के विरुद्ध संगठित प्रतिरोध किया।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

वर्तमान शोध-पत्र भी इसी वैकल्पिक इतिहासलेखन की दिशा में प्रयासरत है। यह अध्ययन बिहार की महिलाओं की भूमिका को केवल 'उपस्थित' नहीं, बल्कि 'निर्णायक' और 'परिवर्तनकारी' रूप में प्रस्तुत करता है। यह निष्कर्ष पारंपरिक इतिहासलेखन की सीमाओं को चिन्हित करता है और इस बात पर बल देता है कि भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को पूर्ण रूप से समझने के लिए महिलाओं की भूमिका को केंद्रीय स्थान पर रखना आवश्यक है।

9. निष्कर्ष

बिहार की महिलाओं की भूमिका स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में केवल स्थानीय या सीमित परिधि तक की नहीं थी, बल्कि वह भूमिका एक सांस्कृतिक और राजनीतिक चेतना के पुनर्निर्माण का आधार बनी। उन्होंने न केवल विदेशी सत्ता के विरुद्ध सविनय अवज्ञा का साहस दिखाया, बल्कि सामाजिक पितृसत्ता की जड़ताओं को भी ललकारा। चाहे वह विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार हो, शराब-विरोधी आंदोलन में भागीदारी, प्रभात फेरियों का आयोजन या जेल यात्राएँ — इन सभी में स्त्रियों की भूमिका प्रेरणादायक, संगठित और प्रतिरोधमूलक रही।

यह स्पष्ट होता है कि इन महिलाओं ने राष्ट्रीय आंदोलन को केवल समर्थन ही नहीं दिया, बल्कि उसे एक नई सामाजिक दृष्टि, संवेदना और नैतिक बल प्रदान किया। उन्होंने अपने संघर्ष से यह सिद्ध किया कि स्वतंत्रता केवल राजनैतिक नहीं, बल्कि सामाजिक और लैंगिक मुक्ति का भी प्रश्न है। उनका यह योगदान एक गहन ऐतिहासिक पुनर्पाठ की माँग करता है, ताकि इतिहास में वह स्थान उन्हें मिले जिसकी वे अधिकारी हैं।

गेराल्डिन फोर्ब्स (1996) और उमा चक्रवर्ती (2003) जैसे विद्वानों ने बार-बार इस बात पर बल दिया है कि स्त्रियों के बिना भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की व्याख्या अधूरी रहेगी। यह शोध-पत्र इसी दिशा में एक विनम्र प्रयास है — जो बिहार की उन स्त्रियों की स्मृति को पुनर्स्थापित करता है, जिन्होंने अपने कंधों पर इतिहास को गढ़ा, परंतु स्वयं इतिहास में लगभग विस्मृत रहीं।

अब समय आ गया है कि भारतीय इतिहास लेखन में महिलाओं को सहायक नहीं, केन्द्रीय ऐतिहासिक पात्रों के रूप में स्थान दिया जाए।

Corresponding Author: preetybharati81@gmail.com

10. संदर्भ ग्रंथसूची

1. Home Department Files (1930–1933), Bihar State Archives, Patna.
2. First Information Reports and District Magistrate Notes (1930–1933), Patna, Gaya, Muzaffarpur.
3. *Searchlight* (1930–1933), English Daily, Patna editions.
4. *Desh* (Hindi Weekly), 1930 editions, Bihar.
5. Bihar Legislative Assembly Debates, 1930–32.

6. Forbes, Geraldine. *Women in Modern India*. Cambridge University Press, 1996.
7. Chakravarti, Uma. *Gendering Caste: Through a Feminist Lens*. Stree, 2003.
8. Ray, Bharati. *Early Feminists of Colonial India*. Oxford University Press, 2002.
9. Nair, Janaki. *Women and Law in Colonial India*. Kali for Women, 1996.
10. Chandra, Bipan et al. *India's Struggle for Independence*. Penguin Books, 1989.
11. Sarkar, Sumit. *Modern India, 1885–1947*. Macmillan, 1983.
12. Omvedt, Gail. *Reinventing Revolution*. M.E. Sharpe, 1993.
13. Bandyopadhyay, Sekhar. *From Plassey to Partition*. Orient BlackSwan, 2014.